Vol 8, Issue 5, 2025 **Impact Factor: 8.535** DOI: https://doi.org/10.31426/ijamsr.2025.8.5.8332

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

प्रेमचंद जी की कहानियों में दलित विमर्श की अवधारणा का अध्ययन

सौम्य एस [1]

[1] शोधकर्ता, इतिहास हिंदी, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी, म.प्र.

डॉ. निशा मिश्रा [2]

[2] सहायक प्रोफ़ेसर, इतिहास हिंदी, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी, म.प्र.

सारांश

मुंशी प्रेमचंद हिंदी साहित्य के ऐसे यथार्थवादी कथाकार हैं जिन्होंने समाज के उपेक्षित, शोषित और वंचित वर्गों की पीड़ा को अपनी कहानियों में मार्मिक अभिव्यक्ति दी। उनकी कहानियों में दलित विमर्श केवल सहानुभूति का विषय नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना की गहरी आलोचना के रूप में उभरता है। ठाकुर का कुँआ, पूस की रात, गुल्ली डंडा, सुभागी, घासवाली, दो बैलों की कथा, दूध का दाम आदि कथाओं में जातिगत भेदभाव, आर्थिक शोषण, सामाजिक बहिष्कार और मानवीय गरिमा के प्रश्नों को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है। प्रेमचंद ने दलित पात्रों को दया के पात्र के रूप में नहीं, बल्कि संघर्षशील और संवेदनशील मनुष्य के रूप में चित्रित किया है। उनकी दृष्टि में सामाजिक समानता और मानवीय मूल्यों की स्थापना अत्यंत आवश्यक है। दलित जीवन की विडंबनाओं के माध्यम से वे सामंती व्यवस्था और रूढ़ सामाजिक मान्यताओं पर प्रहार करते हैं। इस प्रकार प्रेमचंद की कहानियाँ दलित चेतना के आरंभिक स्वर को साहित्यिक आधार प्रदान करती हैं और सामाजिक न्याय की दिशा में वैचारिक प्रेरणा देती हैं।

मुख्यशब्द– मुंशी प्रेमचंद, हिंदी साहित्य, जातिगत भेदभाव, सामाजिक बहिष्कार, मानवीय गरिमा, दलित पात्र, सामाजिक समानता, मानवीय मूल्य, दलित जीवन।

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

प्रस्तावना

साहित्यकार या कलाकार स्वभावत प्रगतिशील होता है। यदि यह उसका स्वभाव न होता तो वह साहित्यकार हीन होता। वह आदर्शवादी होता है। वह अपनी कल्पना में व्यक्ति व समाज को सुख और स्वच्छन्दता की अवस्था में देखना चाहता है। वर्तमान सामाजिक विसंगतिपूर्ण अवस्थाओं से वह कुढ़ता रहता है। वह इन सभी अप्रिय अवस्थाओं का अंत कर देना चाहता है, जिससे दुनिया जीने और मरने के लिए बेहत्तर स्थान हो जाए। प्रेमचंद भी इसी प्रगतिशील विचारधारा वाले साहित्यकार थे। इन की समस्त रचनाओं में सामाजिक ऊँच–नीच, जाति–पाति के क्रूर विभाजन, गुलामी और दरिद्रता के विरूद्ध वेदना पूर्ण प्रतिरोध का भाव था जो अंत समय तक इनकी कृतियों में रक्त की तरंगों की भाँति प्रवाहित रहा।

आरम्भ से अंत तक राजनीतिक और मानसिक दासता से मुक्ति ही प्रेमचंद के साहित्य की मुख्य ध्वनि रही है। इस दासता से मुक्ति प्राप्त करने के साधन क्या है? इनके लिए वे आदर्शवाद को लेकर चले, लेकिन जैसे–जैसे उनका सामाजिक और राजनीतिक ज्ञान बढ़ता रहा उनके विचारों में प्रौढ़ता आती गई और वे आदर्शवादी से यथार्थवादी बनते गए। वे सुधार की जगह संघर्ष और क्रांति को सारे रोग का निदान समझने लगें।

प्रेमचंद जमीन से जुड़े व्यक्ति थे। उन्होंने जमीन से जुड़े लोगों के बारे में लिखा। जो सदियों से अपने अधिकारों से वंचित थे, उनके लिए लिखा। समाज के चौथे वर्ण अर्थात अंतिम व्यक्ति के लिए लिखा। उनकी कहानियों में जीवित दलित पात्र कहीं प्रत्यक्ष तो कहीं अप्रत्यक्ष रूप से अपनी बात कह पाठक के मन पर गहरी छाप छोड़ जाते हैं। उनकी मुख्य समस्याएँ भी औरों की तरह आर्थिक सामाजिक, शैक्षिक या फिर दूसरे मूलभूत अधिकारों से जुड़ी होती हैं. पर अंत में सवाल तो सिर्फ सामाजिक स्वीकार्यता एवं स्वाभिमान का रह जाता है।

दलितों का दिल भी सवर्णों की भाँति धड़कता है। फर्क इतना भर है कि स्वर्ण का जीवन रोशनी तले संघर्ष करता है, जिसे मंजिल की उम्मीद होती है। जबकि दलित का जीवन अंधेरे तले संघर्ष करता है और उसे उसकी मंजिल मिल भी जाएगी, इसकी उम्मीद जरा कम ही लगती है। दलित विमर्श के इसी संदर्भ को समझने हेतु उनकी रचनाओं के दलित पात्रों का विश्लेषणात्मक अध्ययन बेहद आवश्यक है। प्रेमचंद रचित लगभग तीन सौ से अधिक कहानियों में से लगभग एक चौथाई

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

में दलितों की चित्कार सुनाई देती है। फिर चाहे वह मुख्य पात्र के माध्यम से हो या फिर किसी गौण पात्र के। इसी विषय से संबंधित उनकी कुछ चुनिंदा कहानियों के पात्रों का विश्लेषणात्मक अध्ययन इस प्रकार है–

ठाकुर का कुँआ

गाँवों में जाति भेद की समस्या प्रेमचंद के समय में भी थी और आज भी है। इसकी जड़े इतनी गहरी और भयावह हैं कि वे दलित के जन्म से ही उसके रक्त के भीतर समा जाती है। हवा पर तो मनुष्य का कब्जा नहीं हैं, लेकिन पानी पर उसने जरूर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया है।

जोखू के गाँव में दलितों के लिए अलग से कच्चा पक्का कुँआ है, जिसका पानी किसी मरे जानवर के गिरने से दूषित हो जाता है। बस्ती के अछूत उसे पीने को मजबूर है, लेकिन गंगी जानती है कि उसे पीने से वे बीमार हो सकते हैं।

वह अपने पति जोखू के लिए ठाकुर के कुँए से पानी लाने की बात कहती है. जिस पर जोखू का यह जवाब उनकी बिरादरी की पीड़ा को बयां कर देता है।

जोखू ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा, श्दूसरा पानी कहाँ से लाएगी? ठाकुर और साहू के दो कुँए तो हैं।

क्या एक लोटा पानी न भरने देंगे?

हाथ–पाँव तुड़वा आएगी और कुछ न होगा। बैठ चुपके से। ब्राहमण–देवता आर्शीवाद देंगें, ठाकुर लाठी मारेगें, साहूजी एक के पाँच लेंगे। गरीबों का दर्द कौन समझता है! हम तो मर भी जाते हैं, तो कोई दुवार पर झाँकने नहीं आता, कंधा देना तो बड़ी बात है। ऐसे लोग कुँए से पानी भरने देंगे?–

जोखू और गंगी का यह संवाद ग्रामीण परिवेश में बह्ममण, क्षत्रिय और वैश्य के दबदबे को पुष्ट करता है। हवा और पानी पर सबका अधिकार है, लेकिन वर्ण–व्यवस्था ने इसे भी बाँट दिया है। सवर्णों के कुँए पर जानवर तो पानी पी सकते हैं, लेकिन अछूत नहीं। पानी के लिए गंगी की यह जद्दोजहद अछूतों के चरम संघर्ष का प्रतीक है।

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

गंगी जगत की आड़ में बैठी मौके का इंतजार करने लगी। इस कुँए का पानी सारा गाँव पीता है। किसी के लिए रोक नहीं, सिर्फ ये बदनसीब नहीं भर सकते।

गंगी कुँए से पानी खींचने में कामयाब भी हो जाती है, लेकिन अंतिम समय में ठाकुर की आवाज सुन, उसके हाथ काँप उठते हैं. घड़ा छूट जाता है। वर्ण–व्यवस्था ने अछूतों के रक्त में जाति–भेद का यह भय सदियों पूर्व ही डाल दिया था। गंगी का प्रयास असफल हो जाता है।

गंगी झुकी कि घड़े को पकड़कर जगत पर रखे कि एकाएक ठाकुर साहब का दरवाजा खुल गया। शेर का मुँह इससे अधिक भयानक न होगा। गंगी के हाथ से रस्सी छूट गई। रस्सी के साथ घड़ा पानी में गिरा और कई क्षण तक हलकोरे की आवाजें सुनाई देती रही।

गाँवों में अछूतों पर उच्च वर्ग का दबदबा रहता है। गंगी जानती थी कि यदि वह वहाँ रूकी तो उसकी सजा तय है। इसलिए उसने वहाँ से निकल लेने में ही भलाई समझी।

ठाकुर कौन है, कौन है? पुकारते हुए कुँए की तरफ जा रहे थे और गंगी जगत से कूदकर भागी जा रही थी। घर पहुँचकर देखा कि जोखू मुँह से लगाए वहीं मैला गंदा पानी पी रहा है।

वर्ण–व्यवस्था में अछूतों को शिक्षा से दूर रखा गया था। शिक्षित होने पर वे अपने अधिकारों की बात जो कर सकते थे। गंगी शिक्षित होती तो वह गंदे पानी को उबाल कर उसे शुद्ध भी कर सकती थी। गंगी और जोखू का यह संघर्ष समाज में अछूतों की शोचनीय स्थिति को दर्शाता है।

पूस की रात

प्रेमचंद की इस अमर कहानी का दलित पात्र हल्कू, जिसने शायद गरीबी के अतिरिक्त न तो जागते कुछ देखा और न ही सोते। देश के लिए अनाज पैदा करने वाला किसान गरीबी के कारण निर्दयी मौसम के कहर का सामना किस भाँति करता है, हल्कू इसका ज्वलंत उदाहरण है। जिस समय सारा देश चौन की नींद सोया होता है, उस समय देश के प्रहरी सीमा पर जाग रहे होते हैं और गरीब किसान अपने खेतों में। हल्कू की यह अवस्था उसकी दयनीय स्थिति को बताने में सक्षम है–

एक घंटा और गुजर गया। रात ने शीत को हवा से धधकाना शुरू किया। हल्कू उठ बैठा और दोनों घुटनों को छाती से लगाकर सिर को उसमें छिपा लिया, फिर भी ठंड कम न हुई। ऐसा जान पड़ता था. सारा रक्त जम गया है, धमनियों में रक्त की जगह हिम बह रही हैं।

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

कड़कते जाड़े की वह रात हल्कू के लिए इतनी लंबी हो जाती है कि उसका सारा जीवन उसके सामने बौना प्रतीत होता है। वह जाड़े की ठिठुरन से हार जाता है और अपना खेत नीलगायों की भेंट चढ़ा देता है। रात के उस सन्नाटे में उसका कुत्ता जबरा ही उसका साथी बनता है। असल में प्रेमचंद ने हल्कू की तुलना बड़ी सफाई से एक पशु से की हैं। जबरा की स्थिति भी तो हल्कू की ही भाँति थी। वह भी तो जाड़े में जम रहा था। हल्कू का यह संवाद उनकी शोचनीय स्थिति को दर्शाता है–

हल्कू ने घुटनियों को गर्दन में चिपकाते हुए कहा– श्क्यों जबरा, जाड़ा लगता है? कहता तो था, घर में पुआल पर लेटा रह, तो यहाँ क्या लेने आए थे। अब खाओ ठंड, मैं क्या करूँ।`

हल्कू उन निर्धन किसानों का प्रतिनिधि है, जो चाहे कुछ समय के लिए ही सही, स्वयं को धरती का मालिक समझने की भूल कर बैठते हैं। फिर किसान और मौसम के बीच के दंद्व में पराजित होकर हल्कू की भाँति मजदूर बनना ही ठीक समझते हैं।

गुल्ली डंडा

दलित सदियों से ही पिछड़ा रहा है, दब्बू रहा है। छोटी जाति का गरीब गया और उसके बचपन के सवर्ण मित्र के बीच हुआ गुल्ली डंडा का खेल इसका प्रमाण है।

श्खेल शुरू हो गया। मैंने गुच्ची में गुल्ली रखकर उछाली। गुल्ली गया के सामने से निकल गई। उसने हाथ लपकाया, जैसे मछली पकड़ रहा हो। गुल्ली उसके पीछे जाकर गिरी। यह वही गया हैं, जिसके हाथों में गुल्ली जैसे आप ही जाकर बैठ जाती थी।

गया अछूत है और जानता है कि ऊँची बिरादरी की हाँ में हाँ मिलाने में ही कुशल है। वह खेल में अपने सवर्ण साथी की इच्छा पर निर्भर है। उसका दब्बूपन उसे हर क्षण उसकी सीमा बताता रहता है। इसलिए वह खेल में अपने साथी की बेईमानी का भी समर्थन करता है. जिसकी पुष्टि ये वाक्य करते हैं–

आधे घंटे पदाने के बाद एक बार गुल्ली डंडे में आ लगी। मैंने धाँधली की–गुल्ली डंडे में नहीं लगी, बिल्कुल पास से गई, लेकिन लगी नहीं।

गया ने किसी प्रकार का असंतोष नहीं प्रकट किया।

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

न लगी होगी।

डंडे में लगती तो क्या मैं बेईमानी करता?

नहीं भैया, तुम भला बेईमानी करोगें।

ऐसा भी नहीं है कि अछूत गया हमेशा ही दब्बू रहता है। अपनी बिरादरी के लोगों में वह शेर से कम थोडे ही है। वहाँ उसकी कोई सीमा नहीं है। वह अपने लोगों से अपनी हद से बाहर आकर भी बात कर सकता है। ये वाक्य उसकी सहज स्थिति को दर्शाते हैं–

पदाने में एक युवक ने धाँधली की। उसने अपने विचार में गुल्ली लपक ली थी। गया का कहना था. श्गुल्ली जमीन में लगकर उछली थी। इस पर दोनों में ताल ठोकने की नौबत आई। युवक दब गया। तमतमाया हुआ चेहरा देखकर डर गया। बेशक यह कहानी अमीर–गरीब के बीच की गहराईयों को मापती है। पर जब बात अमीर सवर्ण और गरीब अवर्ण की हो तो गया तो क्या कोई और भी हो तो दब्बू नहीं बनेगा तो और क्या बनेगा? इस प्रश्न को नजर अंदाज करना शायद असंभव है।

सुभागी

दलित समाज में लाख कमियों के बावजूद उनके प्रगतिशील विचारों को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता। जहाँ विधवा विवाह हेतु सवर्ण समाज की विचारधारा संकीर्ण मानी जाती है. वहीं दलित समाज में इसका समर्थन खुले तौर पर देखा जा सकता है। विधवा सुभागी के पुर्नविवाह हेतु उसके पिता से हुए ये संवाद इस बात की ताकीद करते हैं–

जब सुभागी जवान हुई तो लोग तुलसी महतो पर दबाव डालने लगे कि लडकी का कहीं घर कर दो। जवान लड़की का यूँ फिरना ठीक नहीं। जब हमारी बिरादरी में इसकी कोई निंदा नहीं हैं, तो क्यों सोच–विचार करते हों?–

सुभागी द्वारा अपने विवाह की बात का विरोध करने पर जब उसे समाज की ऊँच–नीच समझाई जाती है तो वह अपने दृढ़ निश्चय से अपने विचारों को कुछ यूँ प्रकट करती है।

सुभागी ने सिर झुकाकर कहा, श्चाचा, मैं तुम्हारी बात समझ रही हूँ, लेकिन मेरा मन घर करने को नहीं कहता। मुझे आराम की चिंता नहीं हैं। मैं सब कुछ झेलने को तैयार हूँ और जो काम तुम

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

कहो, वह सिर आँखों के बल करूँगी, मगर घर बसाने को मुझसे न कहो। जब मेरी चाल–कुचाल देखना, तो मेरा सिर काट लेना।

अगर मैं सच्चे बाप की बेटी हूँगी तो बात की भी पक्की हूँगी। फिर लज्जा रखने वाले तो भगवान हैं. मेरी क्या हस्ती है कि अभी कुछ कहूँ।

बेंटियों से सदा से ही भेदभाव होता आया है। समाज उन्हें सामानता के अवसर देने से झिझकता है। लेकिन जब सुभागी को जिम्मेवारी का अवसर मिला तो उसने अपने परिश्रम को सिद्ध कर दिया–

गाँव में जहाँ देखों, सबके मुँह से सुभागी की तारीफ। लड़की नहीं, देवी है. दो मर्दो का काम भी करती है, उस पर माँ–बाप की सेवा भी किए जाती है। भारतीय समाज में पिता की अंतेष्ठी और उसके बाद की सभी रस्में पुत्र से ही पूर्ण कराने का रिवाज है। पिता की मृत्यु पर अपने भाई द्वारा पीछे हट जाने पर सुभागी ने पिता के तेहरवें की व्यवस्था की। उसने वे सभी रस्में पूरी की जो एक पुत्र द्वारा होनी चाहिए। लक्ष्मी ने दाह–क्रिया की। इन थोड़े से दिनों में सुभागी ने न जाने कैसे रूपये जमा कर लिए थे कि जब तेरहवीं का सामान आने लगा, तो गाँव वालों की आँखे खुल गई। बर्तन, कपड़े, घी, शक्कर सभी सामान इफरात से जमा हो गए। बेटियों बेटों से कहीं कम नहीं होती। आज हमारी सरकार जहाँ इस सद्विचार का प्रचार करने में लगी है। वहाँ सुभागी ने दशकों पूर्व ही इसका संदेश दे दिया था। कहानी में सुभागी ने एक प्रगतिशील और कर्मनिष्ठ दलित स्त्री का परिचय दिया है।

घासवाली

प्रेमचंद की दलित कहानियों में छाप छोड़ने वाली इस कहानी की नायिका मुलिया अपनी अस्मत को लुटने से बचाने की खातिर जब एक जमींदार की आँखों में आँखें डालकर देखती है तो उसका हृदय ही परिवर्तित कर देती है। चौन सिंह द्वारा उस पर बुरी दृष्टि डालने पर उसके साथ हुए ये संवाद उसके मजबूत आत्मविश्वास को दर्शाते हैं–

मुलिया के होठों पर अवहेलना की मुस्कुराहट झलक पड़ी बोली, फिर भी अगर मेरा आदमी तुम्हारी औरत से इसी तरह बाते करता, तो तुम्हें कैसा लगता? तुम उसकी गर्दन काटने पर तैयार हो

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

जाते की नहीं? बोलो. क्या समझते हो कि महावीर चमार है, तो उसकी देह में लहू नहीं हैं, उसे लज्जा नहीं हैं, अपनी मर्यादा का विचार नहीं हैं?–

मुलिया के कटु शब्दों के बावजूद चौन सिंह ने एक बार फिर से उस पर दाना फैंका– चौन सिंह लज्जित होकर बोला. मूला, यह बात नहीं है। मैं सच कहता हूँ, इसमें ऊँच–नीच की बात नहीं है। सब आदमी बराबर हैं। मैं तो तेरे चरणों पर सिर रखने को तैयार हूँ।

मुलिया दलित थी पर सङ्घरित थी। यह चौन सिंह के मन को भाँप चुकी थी। उसने हिम्मत नहीं हारी और बोली–

श्इसलिए न कि जानते हो. मैं कुछ कर नहीं सकती। जाकर किसी ठकरानी के चरणों पर सिर रखो, तो मालूम हो कि चरणों पर सिर रखने का क्या फल मिलता है। फिर, यह सिर तुम्हारी गर्दन पर न रहेगा।

मुलिया बेशक निर्धन है, दलित है। लेकिन उसमें साहस की कहीं कोई कमी नहीं है। वह जानती है कि धन से अधिक बलवान उसका स्त्रीत्व है और यह भी जानती है कि यदि इरादे मजबूत हों तो किसी बड़े से बड़े आदमी का भी सामना किया जा सकता है।

दो बैलों की कथा

दलित सदियों से धनी लोगों की सेवा में रहते आए हैं, उनके रहमो–कर्म पर आश्रित रहते आए हैं। यहाँ प्रेमचंद ने दो बैलों हीरा और मोती के माध्यम से दासता को परिभाषित किया है। यह दासता मानव व पशु किसी रूप में भी हो सकती है।

हीरा और मोती अपने मालिक से मिले प्यार के सामने तो खूब पसीना बहाने को तैयार हैं। परन्तु जब कोई इन पर दबाव या फिर अन्य किसी प्रकार की सख्ती दिखाकर बेगारी लेना चाहे तो वे विरोध करना भी जानते हैं। कहानी के इन नायकों ने दासता के विरोध में विद्रोह का बिगुल बजाते हुए सुप्त समाज को जगाने का संदेश दिया है। ये पंक्तियों इनकी चेतना को उजागर करती हैं–

श्दोनों बैलों का अपमान ऐसे कभी न हुआ था। झूरी इन्हें फूल की छड़ी से भी न छूता था। उसकी टिटकार पर दोनों उड़ने लगते थे। यहाँ मार पड़ी। आहत सम्मान की व्यथा तो थी ही, उस पर मिला सूखा भूसा नाँद की तरफ आँखे तक न उठाई।

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

दासता की व्याख्या दास ही भलिभाँति कर सकता है। प्रेमचंद के अछूत पात्रों की स्थिति किसी दास से कम नहीं है। दिनभर की जी–तोड़ मेहनत और फिर भी भूखे पेट सोना, पशुओं के बाड़े में कैद हीरा–मोती ने इसे खूब परिभाषित किया है।

श्यहाँ कई भैंसे थी, कई बकरियों, कई घोडे, कई गधे पर किसी के सामने चारा न था, सब जमीन पर मुर्दो की तरह पड़े थे। कई तो इतने कमजोर हो गए थे कि खड़े भी न हो सकते थे।

हीरा और मोती सदियों से सुप्त दलित समाज को क्रांति हेतु आमंत्रित करते हैं। वे उनके अधिकारों के स्वर को तीव्र करते हैं। वे पात्र के रूप में तो पशु है. लेकिन स्थिति इंसान की बयां करते हैं।

दूध का दाम

अछूत मूँगी के दूध पर पले मालिक के बेटे और स्वयं उसके बेटे मंगल की स्थिति पर प्रकाश डालती यह कहानी समाज की अवसरवादिता को दर्शाती हैं। महेशनाथ की पत्नी को दूध न होने पर उसके बच्चे को दूध पिलाने हेतु अछूत मूँगी को पुचकारा जाता है। उसे तरह–तरह के लालच दिए जाते हैं। मंगल अपनी माँ के दूध से वंचित रहता है, उसके हिस्से का दूध मालिक का बेटा पीता है। लेकिन मूँगी के मरने पर उसके बेटे मंगल के साथ इस परिवार का घोर भेद इंसान की घोर अमानवीयता को दर्शाता है।

श्मंगल अब अनाथ था। दिन–भर महेश बाबू के दद्वार पर मॅडराया करता। घर में झूठन इतना बचता था कि ऐसे–ऐसे, दस–पाँच बालक पल सकते थे। खाने की कोई कमी न थी। हाँ उसे तब बुरा जरूर लगता, जब उसे मिट्टी के सकोरे में ऊपर से खाना दिया जाता था।

अनाथ मंगल करे तो क्या करे, जाए तो कहाँ जाए? उसके लिए तो स्वर्ग भी यहीं था और नरक भी यहीं। अपने जैसा कोई मिला तो सिर्फ टोंमी कुत्ता, जो उसे समझता था। दूसरे बालकों के मन में भी उसके प्रति जात–पात का द्वेष स्पष्ट दिखाई देता था।

सुरेश ने पूछा–क्यों रे मंगल, खेलेगा?

मंगल बोला– ना रे भैया, कहीं मालिक देख लें, तो मेरी चमड़ी उधेड़ दी जाए। तुम्हें क्या, तुम तो अलग हो जाओगे।

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

बालक का मन स्थिर नहीं होता। थोड़ा संकोच कर, वह उनके साथ खेल में शामिल हो गया। लेकिन जब खेल में बराबरी का प्रश्न आया तो मंगल ने पूछ ही लिया–

बता दो। मंगल ने शंका की. मैं बराबर घोड़ा ही रहूँगा कि सवारी भी करूँगा? यह

यह प्रश्न टेढ़ा था। किसी ने इस पर विचार न किया था। सुरेश ने एक क्षण विचार करके कहा तुझे कौन अपनी पीठ पर बिठाएगा, सोच ? आखिर तू भंगी है कि नहीं?–

उच्च वर्ग ने सदैव ही अवसरवादिता का लाभ उठाया है। दूध पीने की बारी आई तो भेंगी को खोजा गया और अवसर आया तो उनकी जात पर सवाल उठा दिया गया। मूँगी ने भी महेशनाथ का इन धारधार शब्दों से मुँह बंद कर दिया।

महेशनाथ ने कहा था. दुनिया में और चाहे तो कुछ हो जाए, भंगी–भंगी ही रहेगें। इन्हें आदमी बनाना कठिन है।

इस पर चूँगी ने कहा. श्मालिक, गैंगी बड़ो–बड़ों को आदमी बनाते हैं, उन्हें कोई क्या आदमी बनाएगा!–

चूँगी की बात सुनकर महेशनाथ हँस दिए। उनकी बनावटी हँसी उच्च वर्ग की अवसरवादिता का प्रतीक थी। वास्तव में वे मूँगी की बातों की सच्चाई को समझते थे, लेकिन अपनी जाति का गर्व उन्हें इस सच्चाई को स्वीकार करने से रोकता था। जब समाज उन्हें भंगिन का दूध पिलाने पर आपत्ति करता है और धर्म की दुहाई देता है, तो यह सच्चाई उनके मुँह से बाहर निकल ही आती है।

मूँगी का शासन काल साल–भर से आगे न चल सका। देवताओं ने बालक के भंगिन का दूध पीने पर आपत्ति की, मोटेराम शास्त्री तो प्रायश्चित का प्रस्ताव कर बैठे। दूध तो छुडा दिया, लेकिन प्रायश्चित की बात हँसी में उड़ गई।

महेशनाथ ने फटफटाकर कहा– प्रायश्चित की खूब कही शास्त्रीजी, कल तक उसी भंगिन का खून पीकर पला, अब उसमें छूत घुस गई। वाह रे आपका धर्म।

संसार के प्रत्येक जीव के लहू का रंग लाल और दूध का सफेद होता है। लेकिन इंसान की फितरत में मानवता की बात सिर्फ कागजों पर ही मिलती है, उसके हृदय में तो जाति का प्रश्न ही

IJAMSR

International Journal of Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

रह–रहकर उमड़ता है। इस कहानी में जाति–भेद की गहराई पाताल से भी गहरी प्रतीत होती है। अछूत मंगल का जीवन इसका प्रमाण है।

निष्कर्ष

मुंशी प्रेमचंद की कहानियों में दलित विमर्श सामाजिक यथार्थ की सशक्त अभिव्यक्ति के रूप में सामने आता है। उन्होंने दलित जीवन की करुणा, संघर्ष और आत्मसम्मान को साहित्य के केंद्र में स्थापित किया। उनकी रचनाएँ यह स्पष्ट करती हैं कि जातिगत भेदभाव केवल सामाजिक समस्या नहीं, बल्कि मानवीय संवेदनाओं के ह्रास का प्रतीक है। प्रेमचंद ने अपने कथा–साहित्य के माध्यम से समाज को आत्ममंथन के लिए प्रेरित किया और समानता, न्याय तथा मानवीय गरिमा के मूल्यों को प्रमुखता दी। यद्यपि उनके समय में 'दलित विमर्श' एक संगठित साहित्यिक आंदोलन के रूप में विकसित नहीं हुआ था, फिर भी उनकी कहानियों में इस चेतना के बीज स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। उन्होंने शोषणकारी व्यवस्था के विरुद्ध नैतिक प्रतिरोध का स्वर उठाया और समाज के निचले तबके को मानवीय दृष्टि से देखने का आग्रह किया। इस प्रकार प्रेमचंद की कहानियाँ आज भी सामाजिक समरसता और न्याय की स्थापना के लिए प्रासंगिक बनी हुई हैं तथा दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि को मजबूत आधार प्रदान करती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. हंसराज रहबर, प्रेमचंद जीवन कला और कृतित्य, साक्षी प्रकाशन, दिल्ली, संशोधित संस्करण, वर्ष 2006, पृ. 17

2. अमृतराय, प्रेमचंद, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, वर्ष–1978, पृ. 6 0

3. प्रेमचंद, कहानी– चोरी, मानसरोवर भाग पाँच स्टार पब्लिकेशन, नई दिल्ली, संस्करण वर्ष– 2015, पृ. 90

4 शिवरानी देवी, प्रेमचंद घर में, आत्मा राम एंड संस, नई दिल्ली, संस्करण वर्ष 1991, पृ.2

5. अमृतराय, प्रेमचंद, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, वर्ष–1978, पृ. 6

6. प्रेमचंद, कहानी– प्रेरणा, मानसरोवर भाग चार, स्टार पब्लिकेशन, नई दिल्ली. संस्करण वर्ष 2015, पृ. 1

International Journal of
Advanced Multidisciplinary Scientific Research (IJAMSR) ISSN:2581-4281

7. प्रेमचंद, कहानी कजाकी, मानसरोवर भाग पाँच, स्टार पब्लिकेशन, नई दिल्ली, संस्करण वर्ष–2015, पृ. 119

8. अमृतराय, प्रेमचंद, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, वर्ष–1978.पृ. 10

9 शिवरानी देवी, प्रेमचंद घर में, आत्मा राम एंड संस, नई दिल्ली, संस्करण वर्ष 1991.पू. 7

10. हंसराज रहबर, प्रेमचंद जीवन कला और कृतित्व, साक्षी प्रकाशन, दिल्ली, संशोधित संस्करण, वर्ष 2006, पृ. 21

11. कमर रईस, प्रेमचंद की विचार यात्रा, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, संस्करण वर्ष 1995, पृ. 3

12. अमृतराय, प्रेमचंद, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, वर्ष–1978, पृ. 12

13. कमर रईस, प्रेमचंद की विचार यात्रा, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, संस्करण वर्ष 1995, पृ. 4

14. शिवरानी देवी, प्रेमचंद घर में, आत्मा राम एंडसंस, नई दिल्ली, संस्करण वर्ष–1991, पृ. 40